IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

अरूणाचल प्रदेश के तांग्सा समुदाय का 'मोह-मोल' त्योहार

OM JONG TANGHA
Ph.D. Scholar, Department of Hindi
University of Delhi

सारांश :

अरूणाचल प्रदेश के छब्बीस प्रमुख समुदायों मे से एक है- '*तांग्सा समुदाय*'। जिसके अंतर्गत बत्तीस उप-समुदाय आते हैं. इन उप-समुदायों के मध्य 'मोह-मोल' त्योहार एक विशिष्ट सेतु है, जो अपनी विभिन्नता के बावजूद सम्पूर्ण समुदाय को एक सूत्र में बांधे हुए है। यह एक कृषि आधारित उत्सव के रूप में मनाया जाता है। यह तांग्सा पारंपरिक तालिका के अनुसार नए वर्ष के आगमन का प्रतीक है जो अप्रैल में बुआई के समय से आरंभ होकर, अगस्त में फसल की कटाई तक विभिन्न चरणों में हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। प्रस्तुत आलेख में '***मुकलोम'*** उप-समुदाय के माध्यम से पूरे *तांग्सा समुदाय* में मनाए जाने वाले 'मोह - मोल' त्योहार के ऐतिहासिक विकास और इसके आध्यात्मिक महत्व पर प्रकाश डालता है, जिसमें पारंपरिक *तांग्सा* लोक-गीत, लोक-नृत्य, प्रकृति और पूर्वजों के प्रति सम्मान व्यक्त करने वाले विशिष्ट रीति-रिवाज़ो का सूक्ष्म विश्लेषण किया गया है। साथ ही तांग्सा समुदाय में हो रहे धार्मिक-परिवर्तन, आधुनिकीकरण एवं पश्चिमीकरण के त्रि-आयामी प्रभाव के परिणामस्वरूप सांस्कृतिक संक्रमण के दौर से गुज़र रही *तांग्सा समाज* और उसके कारणों को दर्शाने का प्रयास किया गया है।

बीज शब्द: तांग्सा, मोह-मोल, पूर्वज, अनुष्ठान, रीति–रिवाज, लोक–नृत्य, लोक–गीत, नोंग (ढोल), आध्यात्मिक।

परिचय:

अरूणाचल प्रदेश, जहां भारत में सबसे पहले सूरज अपनी किरणों का प्रकाश बिखेरता है, इसे अरुणोदय की धरती भी कहा जाता है। 'अरूणाचल' दो शब्दों के मेल से बना है 'अरुण' अर्थात 'सूर्य' और 'अचल' अर्थात 'स्थिर पर्वत' जिसका अर्थ हुआ 'उगते सूर्य के पर्वतों' का प्रदेश। सामाजिक, प्राकृतिक और सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण यह राज्य दक्षिण में असम, दक्षिण पूर्व में नागालैंड और अंतर राष्ट्रीय सीमाओ पर पूर्व में म्यांमार, उत्तर में तिब्बत और चीन, पश्चिम में भूटान के साथ अपनी सीमाएं साझा करता है।

यह प्रदेश विभिन्नता में एकता के दर्शन को धरातल पर चरितार्थ करता है। इसके छब्बीस मुख्य समुदाय और सौ से आधिक उप-समुदाय एक समरस परिवार की भांति निवास करते हैं। प्रमुख समुदायों में तांग्सा, सिंगफो, गालो, वांगचू, नोकते, खमती, तुतसा, इदू मिशमी, दिगारु मिशमी, मीजू मिशमी, आदि, तागिन,न्यिशी, मिरी या मिसींग, आपातानी, मोनपा आदि आते हैं। यद्यपि यहां हर अगले गाँव की भाषा, वेशभूषा और खान-पान में विभिन्नता देखने को मिल जाती है किन्तु इन सब का मूल आधार समान है "प्रकृति और पूर्वज"। प्रकृति और अपने पूर्वजों के प्रति यही साझी आस्था यहां के समुदायों को परस्पर जोड़े रखती है। प्रत्येक उपसमुदाय अपनी विशिष्ट संस्कृति, पहचान और परम्पराओ के प्रति अगाध निष्ठा रखते हैं जो इनके पर्वों, रीति-रिवाजों और त्योहारों में जीवंत हो उठती है।

इन छब्बीस प्रमुख समुदायों में से ही एक तांग्सा समुदाय है, जो इस आलेख का केंद्र है। '*तांग्सा'* दो शब्दों के मेल से बना है, 'तांग+सा' 'तांग' का अर्थ है 'पहाड़' और 'सा' का अर्थ है 'लोग' जिसका अभिप्राय हुआ 'पहाड़ के लोग'। *तांग्सा* समुदाय की उत्पत्ति के बारे में उनकी '*रा काऊ हीवे*' नामक लोक कथा में वर्णित है कि तांगसा समुदाय का जन्म '*मसोई सिंरापुम*' पहाड़ से हुआ है और इसी पहाड़ से जन्म के कारण इन्हे '*तांग्सा'* कहा जाता है। 'पारुल दत्ता' ने भी अपनी पुस्तक "*द तंगसास ऑफ द नांचीक एण्ड तिराप वैली*" के प्रथम अध्याय में लिखा है कि "thus all the subtribes of tangsas subscribe to the belief that human being were first created at masoi sinrapum by some supernatural being for whom however they have different names like ra kau hiwe pr afra sikea and so on. It can, therefore, be safely concluded that all the tangsa subtribe originated at one and the same place which they agree in calling masoi sinrapun."[1] आज इस समुदाय के लोग मुख्य रूप से अरूणाचल प्रदेश के चांगलांग ज़िले में रहते हैं और इस समुदाय के अंतर्गत 32 उपसमुदाय और आते हैं जिनमे मुकलोम, लोंगचांग, तिखाक, मूंगरे, जोंकुक, संगवाल, थम्फंग, लुन्फी, तोंग्लिम, हैडली, हावी, हखुन्न आदि।

मूल आलेख:

तांग्सा समुदाय जिसमे 32 उपसमुदाय और आते हैं जिनके बीच बोलियों में अंतर, पहनावे की विभिन्नता और अलग-अलग क्षेत्रीय त्योहारों की चमक देखने को मिलती है लेकिन इन सबका गौरवशाली इतिहास, जीवन शैली, संस्कृति, अटूट विश्वास की जड़ें एक ही हैं 'प्रकृति और पूर्वज'। जिसकी झलक हमे इनके पर्वों, रीति रिवाजों और त्योहारों में देखने को मिलती है, इसका मुख्य उदाहरण 'मोह-मोल' त्योहार है। 'मोह-मोल' इन सभी उपसमुदायों को एक सूत्र में बांधने का काम करता है।

'मोह-मोल' यह एक ही शब्द है, जिसे तांग्सा के विभिन्न उपसमुदाय अपनी भाषाई सुगमता के अनुसार मोह' या 'मोल' के रूप मे उच्चारित करते हैं। जिसका अर्थ है 'तांग्सा नृत्य'। प्रायः *तांग्सा* समुदाय के अन्दर 'मोह' और 'मोल' इन दो शब्दों के अधिक प्रचलन के कारण आज लोग इसे 'मोह – मोल' त्योहार कहकर भी संबोधित कर हैं। मूलतः यह पर्व झूम खेती में धान की बुआई के बाद और फसल की कटाई से पूर्व के अंतराल में मनाया जाने वाला एक अत्यंत महत्वपूर्ण कृषि पर्व है । कुछ उप समुदायों में झूम कृषि में धान के बीज बोने के तुरंत बाद '*तुंगजा-चमजा*' (तुंगजा-चमजा' का मतलब है 'अरुम और धान की आत्मा' 'तुंग' का मतलब है 'अरुम', 'चम' का मतलब है "धान" और दोनों शब्दों में "जा" का मतलब है "आत्मा") की पूजा और सम्मान मे मनाया जाता है, यह पूजा गांव के किसी एक व्यक्ति के घर मे एक सीमबोलिक रिचूअल के रूप मे की जाती है। इसके अंतर्गत दो लोगों को दाई और बाई ओर बिठाया जाता है और उन्हे अलग-अलग *नोंग* (ढोल) दिए जाते हैं, एक में चावल और दूसरे में चावल की दारू और सभी मोलवा (तांग्सा वेशभूषा पहना आदमी जो मोल नृत्य में हिस्सा लेता है) उस घर में अकत्रित होते हैं और तीन गोल नृत्य करते हैं। घर का मालिक चावल पूरब और पश्चिम की दिशा में छिड़कता है जिसे मोलवा को हवा में ही पकड़ना होता है यह अनुष्ठान पूरे गाँव वालों द्वारा तुंग्जा और चमजा को स्पर्श करने का प्रतीक है और इस अनुष्ठान के बिना 'मोल' त्योहार अधुरा समझा जाता है । यह त्योहार केवल एक आयोजन नहीं है बल्कि एक सांस्कृतिक सेतु है जो हर वर्ष अप्रैल के महीने में पूरे तांग्सा समुदाय को एकजुट करता है।

मुकलोम और हावी उपसमुदायों में यह त्योहार 'साहित' (धान बोने के दिन) के बाद मनाया जाता है। *मुकलोम* पारंपरिक कलेंडर के अनुसार '*साहित*' का समय *जाखांग* महीने अर्थात् अप्रैल में होता है और किमसिंग, तिखाक और लोंगचांग आदि *तांग्सा* के उपसमुदाय अपनी झूम खेती के काम के आधार पर अपनी सुविधानुसार अलग-अलग दिनों मे 'मोल' त्योहार मनाते हैं।

[1] Dutta Parul, (1969). The Tangsas. Published by Shri T. P Khaund, Director of information and public relation, NEFA on behalf of North – East frontier agency Administration, Shillong, p.3.

उत्सव के चरण :

'मोह-मोल' त्योहार तांग्सा के समस्त उपसमुदायों में आमतौर पर तीन दिनों तक मनाया जाता है वहीं *'तांग्सा'* के *लोंगचांग, जुगली, मोसांग* उप-समुदायों में इसकी भव्यता पाँच दिनों तक प्रतिध्वनित होती है और मुकलोम उपसमुदाय में यह चार दिवसीय अनुष्ठान के रूप मे संपन्न होता है जिसमे प्रत्येक दिन का अपना एक सांस्कृतिक, सामाजिक और आध्यातमिक महत्व होता है।

पहला दिन: उत्सव का शुभ आरंभ *लूमखट* के साथ पारमपरिक रीति - रिवाजों और अनुष्ठानों का आह्वान करते हुए होता है। इस अवसर पर वंशानुगत *'नोंग रोमवा'* (वह व्यक्ति जो त्योहार के शुभ आरंभ हेतु नोंग(ढोल) की पूजा करता है) द्वारा *नोंग* (ढोल) पर पारंपरिक अनुष्ठान किया जाता है जो पूरे गाव मे उत्सव की औपचारिक घोषणा का प्रतीक है। पारंपरिक की मर्यादा के अनुसार नोंग (ढोल) वादन की शुरुआत सर्वप्रथम 'नोंग रोमवा' या 'सोलवा' द्वारा उनके अपने घर से की जाती है तत्पश्चात वे गाँव के मुख्य प्रांगण की और प्रस्थान करते है जहाँ पारंपरिक वेश भूषा में सजे अनेक 'मोलनू' (मोल वेश भूषा पहने तांग्सा महिला) और अपने वाद्ययंत्रों के साथ तत्पर 'मोलवा' (मोल वेश भूषा पहने तांग्सा पुरुष) बड़ी उत्सुकता से उनकी प्रतीक्षा करते हैं। नियमानुसार *नोंग* (ढोल) वादन का अधिकार केवल वंशानुगत *'सोलवा'* को ही प्राप्त होता है जिनके नेतृत्व मे ही अन्य *'मोलवा'* अपना नोंग (ढोल) बजा सकते हैं और अपनी कला का प्रदर्शन करते है और इसी क्रम में *'मोलनू'* भी लयबद्ध गोल नृत्य करते हुए इस उत्सव की शोभा बढ़ाते हैं। यह *नोंग* (ढोल) उत्सव में लगातार दो दिनों तक बजाए जाते हैं। यह लोग पहले गाँव के मुख्य प्रांगण में सामूहिक मोल नृत्य और नोंग वादन के पश्चात पूरे गाव की परिक्रमा करते है। तांग्सा के उन सभी उप-समुदायों में जहाँ नोंग (ढोल)वादन की परंपरा होती है यह अनिवार्य माना जाता है। यह दल गाँव के हर घर में जाकर गोल नृत्य करते हैं। परंपरानुसार किसी भी घर को इस प्रक्रिया से वंचित रखना ना केवल उस परिवार के लिए अपितु सम्पूर्ण गाव के लिए अपशकुन माना जाता है।

दूसरा दिन: इस दिन भी *'नोंग'* (ढोल) की थाप गूँजती रहती है ताकि उन शेष घरों में भी अनुष्ठान पूर्ण किया जा सके जो पहले दिन छूट गए थी। यद्यपि उत्सव के आरंभ के दोनो दिनों के नृत्य और रीति-रिवाजों में कुछ ज्यादा भिन्नता नहीं होती है किन्तु दूसरे दिन सामान्य दर्शकों को भी अंत मे नृत्य में शामिल होने का सोभाग्य प्राप्त होता है। इस दिन एक तरफ मोल समूह हर घर में ढोल बजाते हुए जाते हैं वही दूसरी तरफ *'रूनवा'* (रूनहुन गाने वाला व्यक्ति) कई युवाओं और बुजुर्गों के साथ मिलकर शाम को एक-दो चुने हुए घरों में *'रूनहुन'* करने के लिए जाते हैं जिसमे *'सोलवा/नोंग रोमते'* का घर स्थायी रूप से चुना जाता है, इसके विपरीत थाल-मोल परंपरा में इस अनुष्ठान के लिए *मोल समिति* द्वारा दो विशिष्ट घरों का चयन किया जाता है।

'रूनहुन' गायन की प्रक्रिया अत्यंत व्यवस्थित और कर्णप्रिय होती है। इसे एक विशेष व्यक्ति (रूनवा) द्वारा गाया जाता है जिसमे समूह के अन्य सदस्य प्रत्येक छंद के अंत में *'रूनवा'* के विराम लेने पर अंतिम तुकबंदी वाले शब्दों को दोहरा कर सुर से सुर मिलाते हैं। इस गायन के साथ किया जाने वाला *रुनहुन नृत्य* एकता का एक जीवंत दृश्य प्रस्तुत करता है यहां प्रतिभागी एक दूसरे का हाथ थामे एक लयबद्ध गोलाकार में बाए से दाए की ओर कदम बढ़ाते हुए नृत्य करते हैं। *'रूनहुन'* लगातार शुरुआत के दो दिनों तक किया जाता है और तीसरे दिन के सुबहे समाप्त करते हैं। तीसरे दिन की शुरुआत मे *'नोंग तासिब'* समारोह जो सभी *'नोंगवा'*(ढोल बजाने वाले) द्वारा मनाया जाता है। यह एक बुजुर्ग अनुभवी विशेषज्ञ द्वारा संचालित किया जाता है जो पारंपरिक नोंग तासिब मंत्रों के गायन में पारंगत होते है। *'नोंग तासिब'* एक औपचारिक प्रार्थना है जो मोल के *नोंग* (ढोल) को बंद करने के लिए एक विशेषज्ञ द्वारा की जाती है। इसके अंतर्गत संबंधित गावों के सभी नोंग (ढोल) समिति हॉल में एक साथ फर्श पर एक घेरे में रखा जाता है और विशेषज्ञ अपने हर जाप के साथ ढोल को अलग-अलग ताल में बजाते हैं और अन्य *'नोंगवा'* भी अपने अपने ढोल बजाकर साथ देते हैं और जैसे ही यह पवित्र अनुष्ठान पूरा होता है उसके बाद से *'नोंग टॉम'* (ढोल बजाना) पूर्णतः मना समझा जाता है जिसके बाद इसे पर्व की निर्धारित अवधि के अतिरिक बजाना अशुभ माना जाता है, इसका उल्लंघन करने पर ग्राम परिषद द्वारा भारी अर्थदंड और पूछताछ की जा सकती है क्योंकी इस समुदाय के लोगों के लिए नोंग या ढोल मात्र एक वाद्ययंत्र नहीं है अपितु यह एक अत्यंत पवित्र और उच्च सांस्कृतिक गरिमा का प्रतीक है। तांग्सा की लोक मान्यताओ और लोक कथाओ में इस *नोंग* (ढोल) की खोज को ही त्योहारों और पर्वों की शुरुआत समझी जाती है और जिसके अर्थात् 'सोलवा' या *'नोंग रोमवा'* द्वारा *'नोंग'* खोजा गया उनके वंशजों को ही मोल जैसे पर्वों में रीति

रिवाज और अनुष्ठानों को करने की अनुमति होती है। यह नोंग तांग्सा समुदाय की ऐतिहासिक पहचान का अभिन्न हिस्सा है, जिसकी पूजा 'मोह-मोल' जैसे पर्वों में पूरी निष्ठा और पवित्रता के साथ की जाती है।

तीसरा दिन: इसे '*हौते यगरी खब*' का दिन कहा जाता है, जो हर मामा और भांजे-भाँजियों के बीच एक अटूट प्रेम और सम्मानपूर्ण संबंधों को रेखांकित करता है। इस परंपरा के अंतर्गत प्रत्येक परिवार में मामा अपने भांजे-भाँजियों की कलाई पर *'रिथिंग'* (पवित्र धागा) बांधते है और उन्हे '*सोक्वी'* (सर्दी जुखाम व मौसमी बीमारी) से बचे रहने, उज्ज्वल भविष्य और दीर्घायु की मंगल कामना करते है।

चौथा दिन: इसे *'युंग चोल अथवा युंग रूह साल'* कहा जाता है। मोल उत्सव का समापन इस दिन युंग चोल अथवा युंग रूह के साथ किया जाता है। '*युंग चोल*' और 'युंग रूह' से तात्पर्य पानी के रास्ते को बदल कर मछली पकड़ने से है। इस विशेष दिन सम्पूर्ण समुदाय सामूहिक रूप से मतस्य आखेट की गतिविधियों मे शामिल होते हैं। इस परंपरा का मूल उद्देश्य केवल मछली पकड़ने या मनोरंजन मात्र से नहीं बल्कि वे इस दिन को मोल के आखिरी दिन और उसके बाद नए साल के आगमन, समुदाय को '*सोकवी'* (सर्दी जुखाम और मोसमी बीमारी) तथा बीते वर्ष मानवीय द्वेष या शत्रुओ की दुर्भावना के कारण उत्पन्न हुई तमाम नकारात्मक ऊर्जाओं से मुक्ति के लिए यह अनुष्ठान एक आध्यात्मिक शुद्धिकरण की भांति है जहाँ अपनी व्याधियों, दुखों और शत्रुता के प्रभावो को विसर्जित कर नए वर्ष में नई ऊर्जा और सद्भावना के साथ कदम रखा जाता है।

सोलवा/ नोंग रोमवा/ लमसोलते पर तांग्सा मान्यताएं :

'*नोंग*' (ढोल) जो समुदाय के त्योहारों की उत्पत्ति का आधार है, तांग्सा समुदाय की पारंपरिक लोक कथाओं, लोक गीतों और मान्यताओ के अनुसार यह मानवीय निर्मित न होकर वन्य जगत की एक अनमोल धरोहर थी। लोक कथाओ के अनुसार यह *नोंग* (ढोल) बाँस की घनी झाड़ियों में रहने वाली '*थारु*' नामक रहस्यमयी जीव का माना जाता है। इस '*नोंग'* (ढोल) की आलौकिक ध्वनि सबसे पहले दो भाइयों ने सुना थी जो जंगल शिकार के मकसत से गए थे किन्तु थारु द्वारा बजाए जा रहे '*नोंग*' (ढोल) की आलौकिक ध्वनि से वे बहुत प्रभावित हुए और उस ध्वनि का पीछा करते हुए वे उस '*थारु*'जानवर के पास जा पहुंचे। यह वही *'थारू'*था जो आलौकिक ध्वनि अपने नोंग (ढोल) से निकाल रहा था दोनों भाई *थारू* से वह नोंग (ढोल) छीन लेते हैं और वे हर सुबह अपने आँगन में उसे बजाने लगते हैं। उनके द्वारा बजाए जा रहे नोंग (ढोल) की मधुर आवाज़ ने उनके पड़ोसी को भी मोहित कर लिया और उसमें भी वाद्ययंत्र को देखने की जिज्ञासा उत्पन्न हुई। जैसे ही सुबह दोनो भाई नोंग बजाते तो वह उसे देखने की कोशिश करता लेकिन पड़ोसी की आहत सुनते ही दोनो भाई नोंग (ढोल) को '*कल-रांग*' (जोकि तांगसा घर में आंतरिक छत होती है जहाँ वे लोग सामान रखते है) पर छुपा देते। अतः पड़ोसी सत्य जानने के लिए एक योजना बनाता है और एक दिन वह सुबह होने से पहले ही उनके घर जा छुपता है और सुबह तक वही रहता है। सुबह दोनो भाई उठते हैं और अपना नोंग निकाल उसे बजाकर उसकी आलौकिक ध्वनि का आनंद लेते और फिर खेती के लिए चले जाते हैं तभी सही मौका देख पड़ोसी *नोंग* (ढोल) को चुरा लेता और दिनभर उसकी ध्वनि का आनंद लेता है। शाम को दोनों भाई घर आकर नोंग ढोल को गायब पाते, तभी पड़ोस से *नोंग* (ढोल) की आवाज़ सुनकर वह जान जाते कि उनके नोंग की चोरी उनके पड़ोसी ने की है। इससे दोनों में विवाद हो जाता है। अतः इस विवाद को सुलझाने के लिए यह तय हुआ कि एक पक्ष '*उरोम रंग*' पूजा का उत्तरदायित्व संभालेगा और दूसरा 'सोलवा' के रूप में मोल नृत्य समूह का नेतृत्व करेगा । यही कारण है कि आज भी मोल त्योहार के अवसर पर एक कबीला नोंग (ढोल) की पूजा करता है और दूसरा कबीला सम्पूर्ण उत्सव के नृत्य का संचालन करता है। इस तरह से दोनो पक्षों में मोल त्योहार को आयोजित करने की जिम्मेदारी आपस मे बांट ली जिसका अधिकार आज भी उनके वंशजों को ही प्राप्त है। *नोंग* (ढोल) की इस उपलब्धता की सांस्कृतिक विरासत का सम्मान करते हुए प्रति वर्ष मोल उत्सव का शुभारंभ 'नोंग रोम'नामक पवित्र अनुष्ठान के साथ किया जाता है जिसमे नोंग (ढोल) की पूजा की जाती है और यह अनुष्ठान उन्ही विशिष्ट पूर्वजों के वंशजों द्वारा सम्पन्न किया जात है।

'रोम-मोल' और 'थाल-मोल':

सांस्कृतिक विविधताओं को समेटे हुए मोल त्योहार के दो प्रमुख स्वरूप मिलते है, *'रोम मोल'* और *'थाल'* या *'पांग-मोल'*। *'रोम-मोल'* का आयोजन मुख्य रूप से मुकलोम के माकांटोंग, ओल्ड खिमयोंग, थमलोंग और हावी क्षेत्र के तोंगठूँग, सोनहू वह जोंगी गांवों में मनाया जाता है। वही *'थाल-मोल'* ओल्ड व न्यू चिंगसा, लोंगके और यानमान सहित 'मुकलोम' के कई अन्य गावों में मनाया जाता है।

प्रायः पहले सभी के यहा खासकर मुकलोम और हावी उपसमुदायों में “रोम मोल” मनाने की परंपरा थी थाल मोल का प्रचलन बाद में शुरू हुआ। इसके पीछे का कारण बताते हैं कि जब समुदाए के कुछ लोग अपने पैतृक गांव से विस्थापित होकर खरसांग, मियाओ और जेरामपुर के मैदानी क्षेत्रों में बसे तो वह अपनी संस्कृति और रीति रिवाजों को भी साथ ले आए और वे उन्हे जीवित भी रखना चाहते थे लेकिन वहां ‘सोलवा/नोंग-रोमतेय/हिम खूँगते’ उनके साथ नहीं आए थे लेकिन वे उन्ही मैदानी इलाकों में अपने पारंपरिक त्योहारों को मनाना और संस्कृति रीति-रिवाजों से खुदकों जोड़े रखना चाहते थे तो उन्होंने वंशानुगत सोलवा के बिना ही मोल त्योहार मनाना प्रारंभ कर दिया जिसमे ‘नोंग रोम’ का अनुष्ठान रह जाता था। अतः इस तरह के मोल त्योहार जिसमे ‘सोलवा नोंग रोमते/हिम खूँगते’ के बिना मनाए जाता है उसे थाल मोल या पाँग मोल के नाम से जाना जाने लगा।

तांग्सा समुदाय: सांस्कृतिक संक्रमण और परंपराओं का संरक्षण:

कई उपसमुदायों के बीच खासकर ग्रामीण इलाकों में आज भी इस त्योहार को पूर्ण पवित्रता, मौलिक रीति रिवाजों, अनुष्ठानों और पूर्वजों की परंपराओ के साथ पूरी भव्यता और पूर्ण निष्ठा के साथ मनाया जाता है । किन्तु आज कई तांग्सा समुदाय की बहुत सी आबादियों में धार्मिक परिवर्तन के कारण सामुदायिक अनुष्ठानों और रीति रिवाजों पर पाबंदी लग गई है। आज वे अपने सारे क्रिया कर्म ईसाई धर्म के अनुसार करते हैं। बच्चे की जन्म, नामांकरण, शादी-ब्याह आदि सभी रिवाज ईसाई धर्मानुसार करते हैं और त्योहारों में वे केवल मनोरंजन और सामाजिक मिलन के लिए शामिल होते हैं। ‘मोह-मोल’ जैसे पर्वों पर तांग्सा समुदाय अपने पूर्वजों को भोजन और पेय-पदार्थ चढ़ाते हैं जोकि पर्वों का एक अनिवार्य और महत्वपूर्ण अनुष्ठान होता है और तांग्सा समाज इस तरह के रिवाजों को सामूहिक रूप से करने के साथ-साथ अपने घर-परिवारों में भी पूर्ण निष्ठा के साथ इन रिवाजों का अनुसरण करते हैं वहीं ईसाई धर्म इस तरह के रीति रिवाजों को व्यर्थ मानता है।

वहीं कुछ उपसमुदाय की बड़ी संख्या बौद्ध धर्म अपना चुकी है, इसलिए वे बौद्ध धर्म के अहिंसा के सिद्धांत का पालन करते हुए अपने त्योहारों में किसी भी जानवर के बलि देने के खिलाफ है जो की तांग्सा समुदाय के हर पर्व त्योहारों में अवश्य किया जाता है। नगरों में रहने वाले खारसंग, जेरामपूर, चांगलांग, मियाओ और इटानगर जैसे नगरों के सार्वजनिक मैदानों मे मोल का सामूहिक आयोजन अत्यंत उत्साह के साथ मनाया जाता है लेकिन यहां इस पर्व का स्वरूप मुख्य रूप से सांस्कृतिक प्रदर्शन, मोज मस्ती और सामाजिक मेल मिलाप तक सीमित रह जाता है यही कारण है कि आज की युवा पीढ़ी इन त्योहारों को हर्षोल्लास के साथ मनाती तो है किन्तु इनके मौलिक रीति रिवाजों और पारंपरिक अनुष्ठानों के व्यवहारिक ज्ञान से उनभिज्ञ रह जाती है। वर्तमान में तांग्सा समुदाय आधुनिकीकरण, पश्चिमीकरण और धर्मांतरण के त्रि-आयामी प्रभाव के कारण एक बड़े सांस्कृतिक संक्रमण से गुज़र रहा है इसके फलस्वरूप युवा पीढ़ी अपनी मूल भाषा संस्कृति,पारंपरिक रीति रिवाजों और लोक उत्सवों से विमुख होती जा रही है।

निष्कर्ष:

तांग्सा समुदाय का मोह-मोल त्योहार केवल एक कृषि उत्सव नहीं बल्कि इस समुदाय की सामूहिक चेतना, ऐतिहासिक पहचान और प्रकृति के प्रति उनकी अटूट कृतज्ञता का जीवंत दस्तावेज़ है। 32 उप-समुदायों की भाषाई और क्षेत्रीय विविधताओं के बावजूद यह पर्व एक ऐसे सांस्कृतिक सेतु के रूप में कार्य करता है जो पूरे समाज को अपने पूर्वजों की विरासत, प्रकृति और मनुष्य के बीच के संबंध को बनाए रखता है। हालाँकि वर्तमान परिदृश्य में यह समुदाय सांस्कृतिक संक्रमण के एक अत्यंत संवेदनशील दौर से गुज़र रहा है। धर्मांतरण, आधुनिकीकरण और पश्चिमीकरण की त्रि-आयामी लहरें पारंपरिक रीति-रिवाजों, अनुष्ठानों, संस्कृति और लोक-गीतों की मौलिकता को चुनौती दे रहे है। जहां शहरों में यह उत्सव एक सांस्कृतिक प्रदर्शन तक सीमित होता जा रहा है, वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में भी धार्मिक बदलावों के कारण पारंपरिक बलि प्रथा और पूर्वजों के प्रति विशिष्ट अनुष्ठान कम होते जा रहे हैं।

अतः मोह मोल की प्रासंगिकता को बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि आधुनिकता के साथ समन्वय बिठाते हुए भी इसकी मौलिकता को संरक्षित किया जाए। आने वाली युवा पीढ़ी को न केवल उत्सव के उल्लास बल्कि इसके पीछे के दार्शनिक अर्थों और पारंपरिक अनुष्ठानों के व्यवहारिक ज्ञान से जोड़ना अनिवार्य है। यदि समय रहते अपनी भाषाई और सांस्कृतिक जड़ों को बचाने का प्रयास नहीं किया गया तो तांग्सा समुदाय की यह गौरवशाली पहचान भविष्य में केवल इतिहास की पुस्तकों तक ही सीमित रह जाएगी।

संदर्भ - ग्रंथ सूची :

1. Dutta Parul, (1969). The Tangsas. Published by Shri T. P Khaund, Director of information and public relation, NEFA on behalf of North – East frontier agency Administration, Shillong.
2. Indira Barua, (2021), 'The Tangsa's of Arunachal Pradesh: A socio demographic profile. Delhi: Concept publishing company pvt. Ltd.
3. रेमोन लोंग्कु, (2024). मुक्लोम आदिवासी के प्रमुख त्योहार और अनुष्ठान. द्विभाषी राष्ट्रसेवक अगस्त, 28-33.
4. Reshma Rekhung. (2023). Cultural significance of the *Moh-Mol* festival of the *Tangsa* community in Arunachal Pradesh. International Journal of Applied Research, 9(1): 407-416.
5. Dhar, Bibhas. (2016). Tribes of Arunachal Pradesh: History and culture. Delhi: Abhijit publications.